हिन्दी साहित्य का सामाजिक उत्थान

डॉ0 रामाश्रय सिंह
वरिष्ठ सहायक प्रोफेसर
हिन्दी विभाग
म0गां0काशी विद्यापीठ
वाराणसी, उत्तर प्रदेश, भारत

''हिन्दी साहित्य का सामाजिक उत्थान'' को देखने की हमारी नजरिया कथा साहित्य से है। यानी कथाकारों ने अपनी कहानियों के माध्यम से समाज को आगे बढ़ाया है। साथ ही साथ समाज के उस बुराईयों को भी रेखांकित किया है। उदाहरणतः हम मुंशी प्रेमचंद को देखें, और उनकी कहानी ''कफन'' जिसमें प्रेमचंद ने सर्वहारा समाज की तीन पीढ़ियों को दर्शाया है। घीसू प्रथम पीढ़ी का नुमाइंदा है। जिसने ठाकुर की बरात में भरपूर भोजन ग्रहण किया था माधव द्वितीय पीढ़ी का प्रतिनिधि है। पत्नी के मरने के बाद ''कफन'' के पैसे से भोजन भरपूर करता है। तृतीय पीढ़ी बुधिया के गर्भ में पल रही संतान।[1] यह सामाजिक उत्थान–पतन की पहली गाथा है। सोजेवतन से लेकर मंगलसूत्र तक प्रेमचंद ने एक लम्बा रास्ता तय किया है। उसके लिए उन्हें सतत् संघर्ष और साधना करनी पड़ी।

उन्होंने स्वयं अपने अतीत से पहले के दृष्टिकोणों और मान्यताओं से संघर्ष किया।

जाहिर है प्रेमचंद का मनुष्य समाज के केन्द्र में पैदा होता है। आज के व्यक्तिवादी संकुचित न्युकिलियर फैमली वाले युग में मनुष्य की चिन्ता भी घटति जा रही है। फिर भी जैनेन्द्र कुमार, भुनेश्वर आदि ने साहित्य के माध्यम से समाज को प्रगति दी।

दूसरी सोच–रेणु की लिखी कहानी–''मारे गये गुल्फाम'' पर तीसरी कसम फिल्म बनीं। जिसे लोकप्रिय गीतकार शैलेंन्द ने प्रोडयूसर किया। यह कथा बता गयी कि हिन्दुस्तान की तासीर गाँवों में बसती है। वह समय था? तब ग्रामीण परिवेश में पढ़े लिखे, हुनर मंद या किसी स्किल में माहिर लोग शहरों की ओर पलायन करना शुरू कर चुके थे। देहात से निकलकर वह शहरात को गले लगाने लगे थे। यह अपने समय की उतनी बड़ी ट्रेजडी थी, जितनी बड़ी देश विभाजन की रहीं। इस ग्रामीण पलायन का असर हमारी संस्कृति पर पड़ा। यह न होता तो विकास केवल कुछ बड़े शहरों तक सीमित न रहकर देहातों में अच्छे नतीजे दे रहा होता। इस टीस को रेणु ने अपनी किस्सागोई का कथ्य बनाया। वे जानते है कि भारत की देह में गाँव नहीं बल्कि उसकी प्राण वायु का केन्द्र भी गाँव ही हैं।[2] उनकी आंचलिक स्टोरी टेलिंग में गाँव की माटी ही लिपी पोती है।

कहना न होगा रेणु जी आंचलिक कथाओं के मुख्य सूत्रधार बनें। ग्रामीण जीवन की हर लय, धुन ताल और सुर को समेटती उनकी कथाओं ने ऐसे कथ्यों को प्रस्तुत किया जिसे जमाना सुन और पढ़कर उसमें अपनी बातों की तस्वीर देखने लगा। वह अद्‌भुत

कथाकर थे। जिन्होंने जिन्दगी को आवाज दी।अपने समय की प्रसिद्ध सप्ताहिक पत्रिका दिनमान में भी उन्होंने लिखा। जे0 पी आन्दोलन में भी उन्होंने सक्रिय रूप में भाग लिया। अपने कथानकों के बारे उनका यह कथन कि–इसमें फूल भी है, भूल भ्झी हैं–गुलाब भी, किचड़ भी, चन्दन भी, सुन्दरता भी, कुरूपता भी है, मैं किसी से दामन बचाकर निकल नहीं पाया। यह कथन उनकी साफगोई और फिलासफी को दर्शाता है। उन्हें पाकर भारत की धरा और भाषा गौरान्वित हुई है। आने वाली कई पीढ़ियों के लिए वह सदा कभी न भूल पाने वाली है। स्मृति हमेशा समाज के साथ रहेगी।

तीसरी सोच दिनकर जी, ये ऋद्धि–सिद्ध और प्रसिद्धि के समवेत साधक थे। विश्वकवि गुरूदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर का नाम लिया जा सकता है। यही से प्रारम्भ होकर मैथिली शरण गुप्त, हरिवंशराय बच्चन और रामधारी सिंह दिनकर के ही साथ, पंत, महादेवी वर्मा, रघुवीर सहाय, आदि के नाम जोड़े जा सकते हैं। इसलिए जोड़े जा सकते हैं कि इनकी लेखनी ने आम जनता के दुःख दर्द, आपदा–विपदा की समस्यायों से जूझते उनके संघर्ष और कष्टमय जीवन को स्वर देने में नहीं हिचकिचाते। उनकी राष्ट्रीय कविताओं में भी आम आदमी का संघर्ष उभरता रहता है। समर शेष है की चन्द पंक्तियाँ ही प्रमाण हैं–

सकल देश में हलाहल है, दिल्ली में हाला है।
दिल्ली में रोशनी, शेष भारत में अँधियाला है।।
..... ज्यों का त्यों है खड़ा,
आज भी मरघट का संसार– समरशेष नहीं है।[3]

इतिहास साक्षी है कि संसद की सीढ़ियों पर चढ़ते समय प्रधानमंत्री नेहरू के पैर लड़खडाने पर दिनकर जी ने हाथ पकड़कर उन्हें सम्भालते हुए कहा था– राजनीति जब भी लड़खाती है, साहित्य उसे आगे बढ़कर संभाल लेता है। यह बात (1952) के समय की है,जब राज्यसभा का सदस्य चुनने पर 1963 में परशुराम की प्रतीक्षा लिखकर सृजन रक रहे। वे परतन्त्र भारत के दौरान भारतीय जीवन व जनता के भीतर सदियों से जमी गुलामी को तोड़ने का काम किया। वे कलाकरों के बीच छेनी, टाँकी, हथौड़ी, कूची और रंग बाँट रहे थे। कहाकि जो इस हथौड़े से चहान का पत्थर तोड़ेगा, और तेरे तोड़े हुए अनगढ़ पत्थर भी काल के समुद्र में फूल के समान तैरेगें।

कहना नहीं होगा दिनकर जी ने गुलाम भारत की जड़ता को तोड़ने का काम अपनी हथौड़े जैसी भारी भरकम परन्तु ठोस कविताओं से किया। कुरूक्षेत्र द्वितीय युद्ध के समय की लिखी कविता है। दिनकर जी ने राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय एकता तथा राष्ट्रभाषा आन्दोलन और गांधी जैसे ग्रंन्थों में हिन्दी को राष्ट्रभाषा बनाये जाने के पक्ष में औचित्य पूर्ण सामाजिक राजनीतिक एवं सांस्कृतिक विवेचन किया।

इसी क्रम में हिन्दी साहित्य के सामाजिक बदलाव या उन्नति के लिए चौथे कथाकार कैलाश बनवासी को चुना हूँ। चुनने के पीछे कोई विशेष कारण नहीं है। बल्कि इन कथाकारों ने समाज को किस दृष्टि से देखा है, उसी का जिक्र है–कैलाश वनवासी की कहानी है बाजार में रामधन''। भूमण्डलीकरण के दौर में एक किसान और बाजार की क्रूर द्वन्द्वों को दर्शाकर मनुष्य और मनुष्य के सम्बन्धों में

गहरे आशयों को अभिव्यक्त किया गया है। रामधन के अनुभव लोक में अजोरी रात का उजाला, चाँदनी राम में नहाये खेत, मेंड़, नहर पेड़, तालाब और उत्साह एवं आनन्द में दौड़ते बैलों की खन–खन आवाज इस संसार की सबसे प्यारी चीजें हैं। यह इंसानियत के सहज रेशों से बुना गया अनुभव लोक है।[4] बाजार से आक्रान्त वर्तमान युग में रामधन जैसा इंसान अपनी तमाम इंसानी दृढ़ता के बावजूद असफल है। उसके प्रतिरोध को कोई नहीं समझता, सिवाय उसके बैलों के, जो उसके अभिन्न मित्र हैं। उसके सखा हैं। जो आज उसकी व्यथा के निमित्त भी हैं। यहाँ लेखक समाज को संदेश देता है कि यहाँ दो बैल और रामधन नहीं बल्कि आपस के तीन गहरे साथी जा रहें हैं। यहाँ किस्से में यथार्थ है। किस्सा शरीर है, लेकिन इस किस्से के भीतर रामधन और उसके बैलों के यथार्थ की जींवत धड़कनों को सुना जाना चाहिए। उदाहरणतः बेचना तो पेड़गा एक दिन। बैल कह रहे हैं, आखिर तुम हमें कब तक बजाओगे, रामधन? कब तक? बीड़ी का वह आखिरी कश था और वह बुझने लगी।

यह रामधन की बीड़ी का ही आखिरी कश नहीं, जिसके जिगर में घुमड़ते हुए इंसानी जज्बातों की चिंगारी की अंतिम तेज आँच थी। जो अब बुझ चलने को विवश हो गयी है। मानवीय सम्बध भी इस्तेमाल करो और फेंको (यूज एन्ड थ्रो) की क्रूर और अमानुषिक राजनीति से प्रेरित हो चुके हैं।[5]

इसी क्रम में पाँचवें सामाजिक उत्थान में हमारे वक्त के यथार्थ को डॉ0 हरिओम ने बड़ी जिन्दा दिली से पिरोया है। कोई नया लेखक जब कहानी के क्षेत्र में उतरता है तो उसकी निगाह

अपनी परम्परा पर जरूर होती है। जैसे नयापन कितना है, भाषा संवदेना आदि के स्तरों पर यह महत्वपूर्ण होता है। यही वजह है कि गाँव देहात के यथार्थ की मनोभूमि के उतरते हुए रागदरबारी और मैलाआंचल हमें एक नए यथार्थ से परचित कराते हैं। भूसा कहानी में एक तरफ शातिर दिमाग और गाँव की जबान में पढ़े कम लढ़े ज्यादा, टुन्नी परधान हैं, दूसरी तरफ पढाईन कर पाने के बावजूद गाँव आकर झोला छाप डाक्टरी और भूसा बेचकर गिरस्ती चलाने वाले डॉ0 प्रजापति। कुछ दिन तो ठीक चलता है पर धीरे–धीरे जब प्रजापति ने परधानी के चुनाव में ताल ठोंकी तो अपने शातिर दांव से उन्हें ढेर कर दिया। इस तरह एक तरफ गाँव का बलौस यर्थाथ, दूसरी तरफ शहरों में गुम होती मानवीय संस्कृति, तीसरी तरफ मिलन और विछोह की परिणतियों को उकेरने वाली बर्फ जैसी कहानी। अपने शीर्षक में जोड़ने के आशय को भी बताना चाहता हूँ कि चरित्र चित्रण की दृष्टि से उनकी कहानियाँ बेजोंड़ है। वे लोगों के मनोवैज्ञानिक में प्रवेश करते हुए उन जटिलताओं और गुत्थियों को आसानी से पकड़ सके हैं, जिनकी ग्रंथिल मनः स्थितियाँ ठीक नहीं हैं। आज भी आधुनिकता और समरता की आबोहवा से गाँव को दूर रखा है।[6]

सामाजिक उत्थान के छठे क्रम में मोहनदास नैमिसराय, सूरजपाल चौहान, अजय नावारिया, ओमप्रकाश वाल्मीकी, जयप्रकाश कर्दम की साहित्यिक अवदान पर चर्चा करूँगा। मोहनदास नैमिसराय, की कहानी 'जहरीली जड़े' समाज में छुआछूत, भेदभाव, स्वार्थ और घोर असंवेदनशीलता के दृश्य को सम्मुख लाती है। एक बालक से

स्कूल और मंदिर में दुर्व्यवहार किया जाता है। मंदिर के गुंबद की सफाई एक नन्हें से बालक से करायी जाती है। यही बालक भीतर बैठकर रामचरित्र मानस की चौपाइयाँ पढ़ता है तो, उसका शख्त आपत्ति की जाती है। मतलब कि धार्मिक स्थल, शिक्षाकेन्द्र, या फिर सरकारी कार्यालय प्रत्येक स्थान पर जातिवादी आग्रहों ने मुनष्य और मनुष्य के बीच घोर असमानता का व्यवहार किया है। प्रतिरोध, प्रतिकार और आक्रोश की मुखरता के पीछे यही कारण है ओमप्रकाश वाल्मीकि की कहानियों का भी मूल स्वर विद्रोह और प्रतिकार का है। ''सलाम'' कहानी में उनकी स्वानुभूति का चित्र है। अंकित सदियों से परम्परा, संस्कार के नाम से जारी गाँवों की जातिगत अन्याय की पीड़ा की वास्तविकता से शहरी समाज अनभिज्ञ है।[7]

दलित आत्मकथाओं में व्यक्त उत्पीड़न, व्यथा, अपमान और अन्याय को इन कहानीयों में सार्थक प्रतिरोध के साथ जोड़ा गया है।

सूरजपाल चौहान की ''साजिश'' कहानी में बैंक मैनेजर एक दलित युवक को ट्रासपोर्ट का व्यवसाय शुरू करने के लिए कर्ज नहीं देता। वह सूअर पालने के लिए कर्म देना चाहता है। यानी वर्चस्वशाली लोग उस व्यवस्था को बनाये रखना चाहते हैं जिसमें वे सत्ता और शक्ति के केन्द्र हों। इसी तरह जयप्रकाश कर्दम की एक और महत्व पूर्ण कहानी है मजबूर खाता''इसमें फैक्ट्री मालिक के ठोस तर्कों के बावजूद बैंक प्रबन्धक का हठ बना रहता है। यह वर्चस्ववाद का नया चेहरा है।जिसे तोड़े बिना सामाजिक न्याय की बात बेईमानी है। सामाजिक न्याय, समानता को आकार देती हैं, सामाजिक न्याय व

परिवर्तन के लिए जरूरी है कि वास्तविक्ताओं को नजर अंदाज नहीं किया जाय, तथा जड़ परम्पराओं, प्रथाओं को तोड़ा जाय।

अजय नावरिया दलित लेखन के नयी पीढ़ी के कहानीकार हैं। उनकी कहानियाँ ऐसे व्यक्तित्व के भीतर प्रवेश कर उसके अवचेतन को खंगालती हैं और अपना एक दर्शन निर्मित करती हैं। विखण्डन और निर्वासन कहानियाँ व्यक्ति की मानसिक स्थिति, उसके अवचेतन को पकड़ने का प्रयास करती है। मानव चेतना में मूलतः मौजूद प्रेम, प्रतिशोध मोह, क्रोध, भय, अविश्वास, आधिपत्य आदि अनेक मनोभावों से टकराते हुए उनकी लेखनी दार्शनिकता की ओर बढ़ जाती है। इस द्वन्द्व, आत्मसंघर्ष और अकेलेपन की भयावहता के बीच ही मार्ग तलाशना है। इसका बोध लेखक को है।[8] यह निश्चित है कि दलित और आदिवासी कथाकारों ने हिन्दी कहानी के अनुभव संसार को समृद्ध किया। हिन्दी कथा संसार मूलतः ग्रामीण और नगरीय अनुभवों का संसार रहा है।

सारांशतः हम अपनी बात राजेन्द्र यादव के सम्पादकीय से समाप्त करूगाँ। इनका कथन है कि लेखक को सत्ता से नहीं व्यवस्था से लड़ना चाहिए। हर समाज के पास अपना एक एंटीना होता है। जो इन मूलभूत बदलाओं या इसकी जरूरत को सबसे पहले सूंघता है, और है वह लेखक।[9]जाहिर है कि यथास्थिति या स्थापित व्यवस्था को तीन स्तरों पर झकझोरता है। एक है मैटाफिजिकल और धार्मिक, दूसरा राजनैतिक और तीसरा नैतिक। यह भी कहा जा सकता है कि सांस्कृतिक विद्रोह की यही अनिवार्य शर्त है। सामाजिक उत्थान में प्रेमचंद से लेकर दलित कथाकारों की

कहानियों को जोड़ कर देखने पर निष्कर्ष यही निकलता है कि समाज में व्याप्त विसंगतियों में सुधारकर समाज को आगे बढ़ाया जा सकता है। लेखकों की कहानियाँ इसमें अपनी भूमिका निभाकर और धार देती हैं। साथ ही साथ लेखक सामाजिक उत्थान के लिए संदेश देते है कि आत्म निर्भरता से बेहतर कोई हथियार नहीं है। इससे अलग दुनिया खुलने का एहसास होगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. *लमही, जनवरी –मार्च, 2020 पृ0 03 सम्पादकीय से*
2. *सोच विचार, सितम्बर 2020 पृ0 49 ऋत्विकराय स्मृति कथा सम्राटः फणीश्वर नाथ रेणु अलकरण*
3. *सोच विचार, सितम्बर 2020 राष्ट्र कवि दिनकर पृ0 46 ओमधीरक*
4. *लमही, जनवरी– मार्च 2020 पृ0 217 सम्बंधों में आता गरिमामय बदलाव, प्रियम अंकित*
5. *वही, पृ0 216*
6. *लमही, जनवरी –मार्चपृ0 265, हमारे वक्त का यथार्थ डॉ0 हरिओम*
7. *लमही, जनवरी–मार्च 2020 पृ0 279, हाशिये का कथासंसार, डॉ0 प्रवीन जैन*
8. *लमही, जनवरी–मार्च 2020 पृ0 286,*
9. *हंस, अक्टूबर 2020, सम्पादकीय से पृ0 5, राजेन्द्र प्रसाद,*